23

यरूशलेम में कलीसिया की स्थापना तथा बढ़ना

30-35 ई.[1] (प्रेरितों 1-7)

I. कलीसिया की स्थापना (प्रेरितों 1, 2)

1. कलीसिया का केन्द्र; प्रतीक्षा के दस दिन। –यीशु के स्वर्गारोहण के बाद यरूशलेम में रह रहे या बच गए चेलों की संख्या एक सौ बीस थी। गलील में रहने वाले चेलों सहित यह संख्या 500 से अधिक थी (1 कुरिं. 15:6)। प्रतिज्ञा किए हुए आत्मा की आशा से 120 जन प्रार्थना करने में लगे रहे। प्रतीक्षा के दिनों में पतरस के सुझाव पर, यहूदा द्वारा आत्महत्या कर लेने के कारण प्रेरिताई का खाली स्थान मत्तियाह के चयन से भरा गया; प्रेरित होने के लिए आवश्यक योग्यता मसीह के पुनरुत्थान का गवाह होना था (प्रेरितों 1:21, 22; 1 कुरिं. 9:1)।

2. पवित्र आत्मा का बपतिस्मा। –*क. समय और उसके साथ घटने वाली बातें।*– मसीह ने फसह पर कष्ट उठाया था: आत्मा पचास दिन बाद पिन्तेकुस्त के दिन आया जो दूसरा बड़ा पर्व था। यह आंख और कान को आकर्षित करने वाली बातों के साथ अर्थात बड़े ज़ोर की आंधी की आवाज, यद्यपि आंधी नहीं; आग की लपटों जैसी जीभों, यद्यपि आग नहीं, के साथ आया।

ख. चेलों पर इसके प्रभाव। बारह प्रेरितों पर इसके प्रभाव तुरन्त, सामर्थपूर्ण और बदलने वाले थे: ''वे सब पवित्र आत्मा से भर गए, और जिस प्रकार आत्मा ने उन्हें बोलने की सामर्थ दी, वे अन्य-अन्य भाषा बोलने लगे।''[2] परन्तु अलौकिक समझ तथा सामर्थ केवल महसूस किए जाने वाले प्रभाव ही नहीं थे। उनमें *नैतिक* परिवर्तन आ गया था। इसके बाद उनके मन में राज्य की कोई सांसारिक अवधारणा नहीं थी, न ही प्रमुख स्थान लेने पर उनका कोई झगड़ा रहा था।

ग. इसका प्रामाणिक महत्व। –यीशु ने सहायक के आने को पिता के पास अपने लौटने के साथ जोड़ा था (यूहन्ना 15:26, 27; 16:7; 7:39; प्रेरितों 2:33)। पिन्तेकुस्त पृथ्वी को अपने प्रभु को ठुकराने का स्वर्ग का जवाब था अर्थात यह एक सार्वजनिक घोषणा थी कि कांटों के मुकुट को महिमा के मुकुट में बदल दिया गया है; जो लोगों के पाप तथा

यीशु के मसीहा होने का सबसे बड़ा प्रमाण था।

घ. लोगों पर प्रभाव पड़े। –प्रेरितों के आस-पास एकदम इकट्ठा होने वाले हज़ारों चकित लोगों के लिए, आत्मा का बपतिस्मा निरूज़र करने वाले, अर्थात बदल डालने वाले सामर्थ के साथ; वास्तव में, अप्रत्यक्ष रूप से परन्तु प्रभावी ढंग से, पतरस के मुख से निकले सुसमाचार के द्वारा आया।

3. पतरस का प्रवचन; उसके परिणाम। –पतरस वज़्ता है; उसके सुनने वाले अर्थात यहूदी अलग-अलग देशों से आए हैं। उनकी पूर्व धारणा को दबाने के लिए, और यह प्रमाणित करने के लिए कि यीशु ही मसीह है वह (1) उसके प्रसिद्ध कामों से; (2) उसकी मृत्यु के द्वारा, जो दुष्ट लोगों द्वारा अनजाने में पूरी की गई परमेश्वर की योजना थी; (3) उसके पुनरुत्थान से जिसकी भविष्यवज़्ताओं ने भविष्यवाणी की थी और प्रेरितों ने उसकी पुष्टि की; (4) भविष्यवज़्ताओं की भविष्यवाणियों और पिन्तेकुस्त के आश्चर्यकर्म से, उसके पिता के दाहिने हाथ महिमा पाने को सिद्ध करता है।

इसके परिणाम थे (1) पाप के विषय में उनका निरुज़र होना; ''सुनने वालों के हृदय छिद गए''[3]; (2) एक स्पष्ट प्रश्न, ''हम ज़्या करें?''[4] (3) एक स्पष्ट उज़र: ''मन फिराओ-और तुम में से हर एक-अपने-अपने पापों की क्षमा के लिए-यीशु मसीह के नाम से (में)-बपतिस्मा ले-तो तुम पवित्र आत्मा का दान पाओगे''[5]; (4) और तुरन्त आज्ञा पालन; ''सो जिन्होंने उसका वचन ग्रहण किया उन्होंने बपतिस्मा लिया; और उसी दिन तीन हज़ार मनुष्यों के लगभग उनमें मिल गए''[6]; (5) ''प्रेरितों से शिक्षा पाने और संगति रखने में और रोटी तोड़ने में और प्रार्थना करने में लौलीन रहे।''[7]

पिन्तेकुस्त के दिन को ''कलीसिया का जन्म दिन'' कहा जा सकता है।

II. यरूशलेम में कलीसिया का बढ़ना (प्रेरितों 3-7)

1. यहूदियों द्वारा पहला सताव। –पिन्तेकुस्त के शीघ्र बाद, पतरस और यूहन्ना ने मन्दिर के द्वार पर एक लंगड़े को चंगाई दी। उसे देखने के लिए इकट्ठे हुए लोगों की भीड़ से पतरस को पिन्तेकुस्त के दिन हुए काम के बाद आगे बताने का अवसर मिल गया। उसके संदेश में सदूकियों ने रुकावट डाली, जिनके लिए पुनरुत्थान का प्रचार विशेष तौर पर आपज़िजनक था और दो प्रेरितों को बंदी बना लिया गया। पतरस के संदेश का असर यह हुआ कि चेलों की संज़्या पांच हज़ार तक पहुंच गई। अगले दिन पतरस और यूहन्ना को महासभा के सामने लाया गया, जिसमें अधिकांश सदूकी ही होते थे और उनसे पूछा गया कि उन्होंने किसके अधिकार से वह आश्चर्यकर्म किया था। उन्होंने दृढ़ता से उज़र दिया कि यह आश्चर्यकर्म यीशु के अधिकार से हुआ था, और उतनी ही निडरता से न्याय करने वालों के सामने यह घोषणा की कि किसी दूसरे नाम के द्वारा उद्धार नहीं है। अधिकारी आश्चर्यकर्म से इन्कार नहीं कर सकते थे और उन्होंने प्रेरितों को धमकाकर अपने आप को संतुष्ट किया तथा उन्हें जाने दिया।

2. भीतर से खतरे; हनन्याह और सफीरा। –यरूशलेम की कलीसिया में हमें मसीही करूणा की एक मिसाल मिलती है (प्रेरितों 2:44, 45; 4:34-37)। अनिवार्य नहीं था (प्रेरितों 5:3, 4), बल्कि पूरी तरह से स्वेच्छा पर निर्भर था। न तो यह विश्वव्यापी था और न ही स्थाई; इसका रूप केवल यरूशलेम की कलीसिया से मिलता है, यद्यपि प्रेरितों के समय की पूरी कलीसिया में करूणा की ऐसी भावना मिलती है। हनन्याह और सफीरा अपनी सज्पज़ि का कुछ भाग प्रेरितों के पास लेकर आए परन्तु देने के समय उनमें बुरी भावना आ गई। पतरस द्वारा तुरन्त उनके पाप बता देने और उसके कदमों में उसी क्षण उनकी मृत्यु से पूरी कलीसिया पर भय छा गया। धर्म में यह अवास्तविकता के विरुद्ध नए समाज की दहलीज में यह एक स्मारक के रूप में है। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि बारह चेलों में से पहले चेले की मृत्यु एक विश्वासघाती की मृत्यु भी और उसने आत्महत्या की थी, और प्रेरितों के समय की कलीसिया में सबसे पहली मृत्यु कपटियों और झूठ बोलने वालों की थी।

3. यहूदियों द्वारा दूसरा दण्ड सताव। –पूरी धार्मिकता के अनुशासन के रूप में हनन्याह और सफीरा पर दण्ड के असर से, सुसमाचार की सामर्थ बढ़ी। चौकस और क्रुद्ध महासभा ने सब प्रेरितों को जेल में डाल दिया। परमेश्वर ने उनसे और काम लेना था। और उसके स्वर्गदूत ने जेल के द्वार खोलकर उन्हें फिर से मन्दिर में सुसमाचार का प्रचार करने के लिए भेज दिया। जेल से उनके रहस्यमय बचाव से परेशान, अधिकारी उन्हें सभा के सामने लेकर आए। प्रेरितों ने मनुष्यों की आज्ञा मानने के बजाय परमेश्वर की आज्ञा मानने का अपना उद्देश्य बता दिया; और गमलीएल की सलाह से ही महासभा कोई हिंसक कदम उठाने से रुकी: ''यदि यह धर्म या काम मनुष्यों की ओर से हो तब तो मिट जाएगा। परन्तु यदि यह परमेश्वर की ओर से है, तो तुम उन्हें कदापि मिटा न सकोगे।''[8] गमलीएल एक फरीसी था, और पौलुस का गुरु भी (प्रेरितों 22:3)। इन प्रारज़्भिक सतावों में फरीसियों का कोई सक्रिय योगदान नहीं लगता।

4. परिश्रम की पहली फूट।[3] –कलीसिया शीघ्र ही विश्वव्यापी बन गई। पिन्तेकुस्त के दिन अलग-अलग देशों से आए पतरस के सुनने वाले (प्रेरितों 2:8-11) शीघ्र ही कलीसिया के पूरक बन गए। पलिश्तीन के बाहर पैदा हुए यहूदी लोगों को हैलेनिस्ट या ''यूनानी भाषा बोलने वाले यहूदी'' कहा जाता था। ''इब्रानियों'' या पलिश्ती यहूदियों की तुलना में प्रेरितों के काम में उनका उल्लेख कई बार आता है। इन दो वर्गों में ईर्ष्या के कारण ही प्रभु के काम में पहली फूट पड़ी। कलीसिया का संगठन धीरे-धीरे बन रहा था। सबसे पहले, प्रेरितों के सब पद भरे गए। प्रतिदिन की खिलाने पिलाने की बातों में बढ़ने के लिए नहीं बल्कि ईर्ष्या को रोकने के लिए, प्रेरितों की सिफारिश से मण्डली में इस काम को करने के लिए सब यूनानी नामों वाले सात पुरुषों को चुना। इस प्रकार डीकन का पद तैयार हुआ। अब प्रेरित अपना पूरा समय प्रार्थना और वचन की सेवकाई में लगा सकते थे। इसका अच्छा असर सुसमाचार के लिए इससे भी बड़ी विजयों में देखा गया, ज़्योंकि बहुत से याजक इस विश्वास को मानने वाले हो गए।

5. पहला मसीही शहीद (6:8-7:60)। –कलीसिया को ज्ञात नहीं था कि उसने

कितना अच्छा आदमी चुना है। उन सात डीकनों में से एक स्तिफनुस ने यूनानियों की विधवाओं को खिलाने-पिलाने की सेवा से आरज़्भ किया; कुछ समय बाद वह यूनानियों के आराधनालय में जीवन की रोटी तोड़ रहा था।

यहां तक चेलों को, यहूदी लोग भी यहूदियों का एक विशेष समुदाय मानते होंगे। अन्यजातियों को शामिल करने के काम को विस्तार देने का कोई स्पष्ट विचार नहीं था। परन्तु स्पष्टतया स्तिफनुस यहूदी मत के रद्द होने की बात समझ गया। एक संवेदनशील बात पर इसका सब यहूदियों पर असर हुआ। बहस में हार गए यूनानियों ने सताव का आश्रय लिया। और अब फरीसी भी सक्रिय हो गए। दूसरे सताव में फरीसी गमलीएल, पतरस की सुरक्षा करने वाले के रूप में सामने आता है; तीसरे में, उसका चेला पौलुस स्तिफनुस के सताने वाले के रूप में ऐसा सरगरम हुआ कि स्तिफनुस जो यरूशलेम की कलीसिया में सबसे उत्साहित व्यज़्ति था पहला मसीही शहीद बन गया। प्रभु की तरह वह यह प्रार्थना करते हुए मरा कि ''हे प्रभु, ये पाप उन पर मत लगा।''[9] कलीसिया ने स्तिफनुस को खो दिया, परन्तु शीघ्र ही उसे पौलुस मिल गया; और संत अगस्टिन के साथ हम कह सकते हैं, -

Si Stephanus non orasset,
Ecclesia Paulum non haberet

अर्थात यदि स्तिफनुस ने प्रार्थना न की होती,
तो कलीसिया को पौलुस नहीं मिलना था।

पाद टिप्पणियां

[1]कलीसिया की स्थापना के लिए एक वैकल्पिक तिथि 33 ईस्वी है। [2]प्रेरितों 2:4. [3]प्रेरितों 2:37. [4]प्रेरितों 2:37. [5]प्रेरितों 2:38. [6]प्रेरितों 2:41. [7]प्रेरितों 2:42. [8]प्रेरितों 5:38, 39. [9]प्रेरितों 7:60.